अथ हरिद्रा तस्या नामानि गुणाँश्चाह

हरिद्रा काञ्चनी पीता निशाऽऽख्या वरवर्णिनी। कृमिघ्नी हलदी योषित्प्रिया हट्टविलासिनी[1]।
हरिद्रा कटुका तिक्ता रूक्षोष्णा कफपित्तनुत्। वर्ण्या त्वग्दोषमेहास्रशोथपाण्डुव्रणापहा॥

हलदी के नाम तथा गुण—हरिद्रा, काञ्चनी, पीता, निशाऽऽख्या (रात्रिवाची सभी शब्द), वरवर्णिनी, कृमिघ्नी, हल्दी, योषित्प्रिया और हट्टविलासिनी ये नाम हल्दी के हैं। **हलदी**—कटु तथा तिक्तरस युक्त, रूक्ष, उष्णवीर्य, कफ पित्त नाशक, शरीर के वर्ण को उज्ज्वल करने वाली एवम् चर्मदोष, प्रमेह, रक्तविकार, शोथ, पाण्डु तथा व्रण को दूर करने वाली होती है॥ १९६-१९७॥

६७ हलदी

हि०—हलदी, हरदी, हर्दी, हल्दी। बं०—हलुद। म०—हलद। गु०—हलदर। क०—अरसिन, अरिसिन। ते०—पसुपु। पं०—हलदी, हलदर, हलज। ता०—मंजल। मला०—मन्जल। फा०—जर्द चोब। अ०—उरुकुस्सफ। अं०—Turmeric (टर्मेरिक्)। ले०—*Curcuma longa, Linn.* (कर्क्युमा लाँगा, लिन.)। Fam. Zingiberaceae (झिंजिबेरॅसी)।

हल्दी—एक बहुत प्रसिद्ध प्रतिदिन के व्यवहार में आने वाली वस्तु प्रायः सब प्रान्तों के खेत में रोपण की जाती है लेकिन बंबई, मद्रास तथा बंगाल में इसकी विशेष रूप से उपज की जाती है। चीन एवं जावा आदि देशों में भी इसकी उपज होती है। **इसका क्षुप**–२–३ फीट ऊंचा होता है। **पत्ते**–केले के नवीन पौधे से निकले हुए पत्ते के समान १–१॥ फुट लम्बे तथा ६–७ इञ्च चौड़े उतने ही लम्बे पर्णवृन्त से युक्त, आयताकार–भालाकार एवं पर्णतल की तरफ कुछ नुकीले होते हैं। पत्तों में आम के समान गन्ध आती है। **फूल**–अवृन्त काण्डज क्रम में निकले हुवे, पीतवर्ण के, संख्या में अल्प तथा करीब १½ इञ्च लंबे; **पुष्पदण्ड**—६ इञ्च या अधिक लम्बा तथा पत्रनाल द्वारा आवृत; पुष्पदण्ड की पत्तियां हलके हरे रंग की होती हैं। इसकी जड़ के नीचे अदरक के समान अदरक से बड़े-बड़े कन्द होते हैं। यह सर्वाङ्ग पीला होता है। इसी कन्द को हल्दी कहते हैं। ये कन्द विभिन्न आकार के, मूल एवं पर्णवृन्तों के चिह्नों से युक्त होते हैं। अन्दर का भाग पीला या नारंगपीत। **भग्न**–शृङ्गवत। **गन्ध**–मधुर। **स्वाद**–कडवा। चूसने पर लालास्राव का वर्ण भी पीत हो जाता है। रंगने के काम में बिना उबाली हलदी का व्यवहार किया जाता है और खाने के काम में हल्दी को उबाल कर सुखाकर प्रयुक्त करते हैं। उबालने से उष्णवीर्य हल्दी की तीव्रता कम हो जाती है। प्रमेह आदि कफ प्रधान व्यक्तियों में कच्ची हल्दी का रस सहपान या अनुपान के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

हलदी को एक विशेष विधि से तयार कर बाजार में बेची जाती है। पहले कन्दों को अलग करके साफ करते हैं। फिर मुलायम होने तक जल में उबालते हैं। स्थान भेद के अनुसार ३० मिनट से ६ घंटे तक उबाला जाता है। उबालते समय इसी के कुछ पत्तों को भी जल में डालते हैं। थोड़ा गोबर मिलाने से इसका रंग अच्छा हो जाता है। फिर इन्हें खुली हवा में फैलाकर बार-बार पलट कर धीरे-धीरे सुखाते हैं। सूखने पर रगड़कर साफ करके उपयोग में लाते हैं।

रासायनिक संगठन—इसमें करक्यूमिन् (Curcumin, $C_{21}H_{20}O_6$) नामक एक पीला एवं रवेदार रंजक पदार्थ होता है जो मद्यसार में पूर्णतया घुल जाता है जिससे गहरे पीले रंग का घोल बनता है। इस घोल में क्षार मिलाने से घोल रक्ताभ बादामी वर्ण का हो जाता है। इसके अतिरिक्त हलदी में ५–६% उडनशील तैल होता है जिसमें कर्पूरवत् गन्ध आती है तथा इस तैल में करक्यूमेन (Curcumen) नामक एक टरपेन (Terpene) होता है जो स्नेहद्रव्य कोलेस्टेरॉल (Cholesterol) को घुलाने के लिए बहुत अच्छा द्रव्य है। हलदी में उपर्युक्त पदार्थों के अतिरिक्त स्टार्च (Starch) २४%, तथा ॲल्ब्युमिनाएड्स् (Albuminoids) ३०% होते हैं।

गुण और प्रयोग—हलदी उष्ण, उत्तेजक, सुगन्धि, रक्तशोधक, त्वग्दोषहर, शोथहर, दीपन, ग्राही, कफघ्न, वातहर, विषघ्न एवं व्रण के लिए लाभदायक है। मसाले के रूप में इसका नित्य व्यवहार होते हुए भी यह एक बहुत अच्छी औषध है।

इसका उपयोग प्रतिश्याय, कफविकार, चर्मरोग, रक्तविकार, प्रमेह, कामला, यकृत् विकार, पार्यायिक ज्वर, अतिसार, संग्रहणी, व्रण एवं नेत्राभिष्यन्द में किया जाता है।

(१) प्रतिश्याय, खांसी, प्रमेह, प्रदर एवं नेत्राभिष्यन्द आदि रोगों में जिनमें श्लेष्मा का अत्यधिक स्राव होता है, इसको दूध में उबालकर गुड़ मिलाकर पिलाते हैं। प्रतिश्याय की प्रारंभिक अवस्था में रात के समय इसके धूएँ को नाक से सुंघाते हैं तथा उसके बाद कुछ देर तक जल नहीं पीने देते। इससे बहुत जल्दी लाभ होता है। खांसी में इसको भूनकर १–२ माशा मधु अथवा घृत के साथ चटाने से लाभ होता है।

(२) आंवले का रस, हलदी तथा मधु इसके प्रयोग से सभी प्रकार के प्रमेहों में अच्छा लाभ होता है। प्रदर में इसके साथ गुग्गुलु या रसांजन का प्रयोग करते हैं।

(३) खुजली, पामा, दाद, शीतपित्त, उदर्द, फोड़े एवं विचर्चिका आदि रक्तविकार एवं चर्म-रोगों में यह बहुत लाभदायक है। इसके लिए हलदी का चूर्ण गोमूत्र के साथ खिलाया जाता है एवं मक्खन के साथ स्थानीय लेप भी करते हैं। इसके विशेष योग हरिद्राखंड का १ तो० की मात्रा में नित्य कुछ समय तक लेने से उपर्युक्त विकारों में पर्याप्त लाभ होता है।

(४) चूना या सज्जी खार हलदी के साथ मिलाकर मोच, ऐंठन, चोट, पिच्चित व्रण एवं पुराने घावों पर लगाने से बहुत लाभ होता है। इसके साथ हलदी तथा मिश्री को खिलाते भी हैं। बिच्छू एवं सर्प आदि के काटने पर वेदना शान्ति के लिए इसका धूआं देते हैं। हलदी एवं फिटकिरी (१ में २०) के सूक्ष्म चूर्ण का कर्णस्राव में कान में प्रधमन करते हैं।

(५) सभी प्रकार के नेत्राभिष्यन्द के लिए यह बहुत लाभदायक है। एक भाग हलदी २० भाग जल में उबाल कर छानकर उसे आंख में बार-बार डालते हैं जिससे आंख की वेदना कम होती है तथा कीचड़ आना भी कम होता है। इसके क्वाथ से रंगे हुए कपड़े का व्यवहार नेत्राच्छादन के लिए किया जाता है।

(६) श्लीपद में इसको गुड़ एवं गोमूत्र के साथ प्रयोग कराया जाता है।

(७) शिरःशूल एवं जोंक के काटने पर रक्तप्रवाह को रोकने के लिए इसका लेप लाभदायक है। चक्कर आता हो तो ताजी हलदी का सिरपर लेप करने से लाभ होता है। घृतकुमारी के गूदे में इसको घिसकर शोथयुक्त अर्श पर लगाते हैं।

(८) भूतोन्माद एवं योषापस्मार आदि में इसका धूआं दिया जाता है।

(९) हलदी के ताजे पत्तों का उपयोग मछली भूनने में एवं घृत की दुर्गन्ध को दूर करने के लिए उपयोग में लाते हैं। ताजी हलदी का अचार भी बनाया जाता है।

मात्रा—चूर्ण २-४ माशा।

६२. हरिद्रा

परिचय

गुण—कुष्ठघ्न, लेखनीय, कण्डूघ्न, विषघ्न, तिक्तस्कन्ध, शिरोविरेचन (च०), हरिद्रादि, मुस्तादि, श्लेष्मसंशमन (सु०)।

कुल—आर्द्रक-कुल (जिञ्जिबरेसी–Zingiberacae)।

नाम—लै०–कर्कुमा लौंगा (Curcuma longa Linn.); सं०–हरिद्रा (हरिं वर्णं द्राति संशोधयति–जो शरीर के वर्ण को ठीक करे), काञ्चनी (सुवर्ण के समान पीतवर्ण होने के कारण), निशा (चाँदनी रात की तरह सुन्दर), वरवर्णिनी (सुन्दर वर्णवाली), गौरी (पीतवर्ण होने से), कृमिघ्ना (कृमिनाशक होने के कारण), योषित्प्रिया (उवटन इत्यादि तथा स्त्रीरोगों में उपयोगी होने के कारण), हट्टविलासिनी (बाजारों की शोभा बढ़ाने वाली); हि०–हलदी, हरदी; पं०–हरदल; बं०–हलुद; गु०–हलदर; क०–आभिनिन; ता०–मञ्जल; ते०–पसुपु; म०–हलद; अ०–कुंकुम; फा०–ज़र्दचोब; अं०–टर्मेरिक (Turmeric)।

स्वरूप—इसका बहुवर्षायु क्षुप २–३ फीट ऊँचा ह्रस्वकाण्ड होता है। **पत्र**–आयताकार, १½–२ फीट लंबे, लगभग ६ इञ्च चौड़े, उतने ही लंबे (१½–२ फीट)

कन्द से लगे रहते हैं। पत्र की मुख्य पार्श्वसिरायें २०–३० उठी होती हैं। पत्तियाँ दोनों पृष्ठ पर चिकनी होती हैं किन्तु उन पर सूक्ष्म सफेद बिन्दु होते हैं। पत्राधार संकीर्ण होता है। आम की तरह गन्ध आती है। **पुष्पदण्ड**–६ इञ्च लंबा पत्रकोष से आवृत होता है जिसमें पीतवर्ण लगभग १½ इञ्च लंबे पुष्प निकलते हैं। पुष्पदण्ड के पत्र हलके हरे रंग के होते हैं। इसके कन्द अदरख के सदृश किन्तु उससे बड़े, भीतर की ओर चमकीले पीले होते हैं। शरदऋतु में पुष्प निकलते हैं।

उत्पत्तिस्थान—यह समस्त भारत में विशेषतः बंगाल, बम्बई और तमिलनाड़ु में इसकी खेती होती है।

हलदी के कन्दों को बाजार में लाने से पहले उबाल दिया जाता है जिससे वे मुलायम हो जाते हैं। फिर सुखा कर रगड़ते हैं जिससे ऊपरी आवरण हट कर रंग में निखार आ जाता है। इस रूप में यह मूल द्रव्य का १७–२५% प्राप्त होता है।

रासायनिक संघटन—इसमें उड़नशील तैल ५–८ प्रतिशत, कर्कुमीन (Curcumin) नामक पीतरञ्जक द्रव्य, होते हैं। इनके अतिरिक्त, विटामिन ए, प्रोटीन ६·३ प्रतिशत, स्नेहद्रव्य ५·१ प्रतिशत, खनिज द्रव्य ३·५ प्रतिशत तथा कार्बोहाइड्रेट ६९·४ प्रतिशत होता है।

गुण

गुण—रूक्ष, लघु	**रस**—तिक्त, कटु
विपाक—कटु	**वीर्य**—उष्ण

कर्म

दोषकर्म—उष्णवीर्य होने से यह कफवातशामक, पित्तरेचक और तिक्त होने से पित्तशामक भी है।

संस्थानिक कर्म–बाह्य—इसका लेप, शोथहर, वेदनास्थापन, वर्ण्य, कुष्ठघ्न, व्रणशोधन, व्रणरोपण, लेखन है। इसका धूम हिक्कानिग्रहण, श्वासहर और विषघ्न है।

आभ्यन्तर–नाडीसंस्थान—यह उष्ण होने से वेदनास्थापन है।

पाचनसंस्थान—यह रुचिवर्धक, अनुलोमन, पित्तरेचक एवं कृमिघ्न है।

रक्तवहसंस्थान—तिक्त होने से यह रक्तप्रसादन, रक्तवर्धक एवं रक्त-स्तम्भन है।

श्वसनसंस्थान—तिक्त होने से यह कफघ्न है।

मूत्रवहसंस्थान—यह मूत्रसंग्रहणीय एवं मूत्रविरजनीय है। प्रमेह के लिए यह श्रेष्ठ है।

प्रजननसंस्थान—यह उष्ण होने से गर्भाशयशोधन तथा तिक्त होने से स्तन्य-शोधन एवं शुक्रशोधन है।

त्वचा—यह कुष्ठघ्न है।

तापक्रम—पित्तशामक एवं आमपाचन होने से ज्वरघ्न है।

सात्मीकरण—यह कटुपौष्टिक एवं विषघ्न है।

प्रयोग

दोषप्रयोग—यह वात, पित्त, कफ तीनों दोषों से उत्पन्न विकारों में प्रयुक्त होता है। विशेषतः कफपित्तशामक है।

संस्थानिक प्रयोग-बाह्य—शोथ-वेदनायुक्त विकारों में विशेषतः आघात लगने पर इसका लेप करते हैं। कुष्ठ, कण्डू आदि त्वग्दोषों में इसे लगाते हैं। वर्ण को सुधारने के लिए उबटन में भी प्रयुक्त होता है। व्रणों के पाचनार्थ इसकी पुल्टिस लगाते हैं तथा शोधन एवं रोपण के लिए इसका चूर्ण या मलहम लगाते हैं। नेत्राभिष्यन्द में इसका आश्चोतन (१ भाग हल्दी १० भाग जल में पका कर छान लेते हैं) तथा विडालक देते हैं। यकृत्प्लीहा की वृद्धि होने पर इसका लेप यकृत्प्लीहा के प्रदेश में करते हैं। अर्श में भी इसका लेप लगाते हैं। हल्दी के टुकड़े या चूर्ण को अंगारों पर रखने से जो धूम निकलता है वह मूर्च्छा, श्वास एवं हिक्का रोगों में प्रयुक्त होता है। इस धूम से वृश्चिकदंश की वेदना भी शान्त होती है।

आभ्यन्तर–नाडीसंस्थान—अभिघातज वेदना तथा नाडीशूल में यह प्रयुक्त होता है।

पाचनसंस्थान—अरुचि, विबन्ध, कामला, जलोदर एवं कृमि में प्रयोग किया जाता है।

रक्तवहसंस्थान—यह रक्तविकार, शीतपित्त, पाण्डु तथा रक्तस्राव में प्रयुक्त होता है। शीतपित्त (अलर्जी) की यह उत्तम औषध है।

श्वसनसंस्थान—यह कास एवं श्वासकष्ट में उपयोगी है।

मूत्रवहसंस्थान—प्रमेहरोग में इसका स्वरस [illegible] देते हैं।

प्रजननसंस्थान—प्रसव के बाद एवं स्तन्यविकारों में हलदी का सेवन कराते हैं। शुक्रमेह में भी यह लाभकर है।

त्वचा—कुष्ट, कंडू, उदर्द आदि विकारों में इसका प्रयोग करते हैं।

तापक्रम—जीर्णज्वर में इसका प्रयोग होता है।

सात्मीकरण—सामान्य दौर्बल्य तथा विष की अवस्थाओं में उपयोगी है।

प्रयोज्य अंग—कन्द।

मात्रा—स्वरस १०–२० मि० लि०, चूर्ण १–३ ग्रा०।

विशिष्ट योग—हरिद्राखण्ड।

× × ×

हरिद्रा, रजनी (Curcuma Longa.), कर्पूरहरिद्रा (Curcuma Aromatica.), आम्रगन्धिहरिद्रा (C. Amada.), वनहरिद्रा।

विविध भाषाओं में नाम-

सं.- हरिद्रा, काञ्चनी, पीता, निशाख्या, क्रिमिघ्ना, हलदी, योषित्प्रिया, हट्टविलासिनी। हि.- हलदी, हर्द, हल्दी। बं.- हरिद्रा, हलुर, हलुद। म.- हलादा। गु.- हलद, हलदर। क.- आरिसिन, अर्शिना। ते.- पसुपु। द्रा.- हलद मञ्जल। मला.- मञ्जल। मरिनलु। फा.- जरद चोव। अ.- अरु कुस्कुकर। अं.- टर्मेरिक (Termeric)। ले.- कर्कयूमा लोंग (Curcuma longa)।

अन्वर्थ ज्ञापिका संज्ञा- क्रिमिघ्नी, योषित्प्रिया, वर्णविधायिनी।

गुण एवं दोष-

धन्वन्तरीय निघण्टु के अनुसार- हरिद्रा स्वरस में तिक्त, रूक्ष तथा उष्ण है और विष विकार तथा कुष्ठ रोग का नाश करती है। यह प्रमेह, कण्डू तथा व्रण का नाश करती है तथा देह के वर्ण को बनाती है। यह शोधन करनेवाली है, क्रिमिहर है, पीनसा तथा अरुचि का नाश करती है।

राजनिघण्टु के अनुसार- हरिद्रा कटु तथा तिक्त रस, रूक्ष एवं उष्ण है और कफ विकार, वात विकार, रक्त विकार तथा कुष्ठ का नाश करती है। यह प्रमेह, कण्डु तथा व्रण का नाश करती है और देह के वर्ण को निखारती है।

भावप्रकाश के अनुसार- हरिद्रा कटुरस, तिक्तरस तथा उष्ण है और वात पित्त को दूर करती है। यह वर्णकारक है तथा त्वचा विकार प्रमेह, रक्त विकार, शोथ, पाण्डु रोग तथा व्रण को नष्ट करती है। वन हल्दी का कन्द कुष्ठ रोग, वात रोग तथा रक्त विकार का नाश करता है। जो आम्र गन्धि हरिद्रा है वह शीतल तथा वातकारक है। वह पित्त को दूर करती है, मधुर है, तिक्त रस है तथा सभी प्रकार के कण्डू का नाश करनेवाली है।

राजवल्लभ के अनुसार- हरिद्रा कफ-पित्त नाशक है, कण्डू तथा त्वचा दोष का नाश करती है, पाण्डु रोग, शोथ, अपची, प्रमेह, कुष्ठ रोग तथा व्रण का नाश करती है।

वैद्यक शास्त्र में हरिद्रा का प्रयोग-

प्रमेह में मधु के साथ मिलाकर हलदी का चूर्ण आँवला के रस के साथ पान करे। (च.चि.अ.६)।

कुष्ठ रोग में हरिद्रा का प्रयोग- हरिद्रा का एक पल की मात्रा में गोमूत्र के साथ एक मास पान करने से पाप रोग (कुष्ठ रोग) का नाश होता है। (सु.चि.अ.९)।

कफोद्भव तृष्णा में हरिद्रा का प्रयोग- हल्दी के साथ सिद्ध जल का मधु तथा शक्कर के साथ कफजन्य तृष्णा में पान करे। (वाग्भट, चि.अ.६)।

श्लीपद में हरिद्रा का प्रयोग- श्लीपद रोग में रोगी रजनी (हलदी) के चूर्ण का गुड़ मिलाकर गोमूत्र के साथ पान करे। (चक्र, श्लीपद चि.)।